3491-3572

संसदीय वाद विवाद

(भाग २—प्रश्न और उत्तर से पृथक् कार्यवाही)

शासकीय वृत्तान्त

लोक सभा

बृहस्पतिवार २४ जुलाई, १९५२

सदन की बैठक सवा आठ बजे समवेत हुई

[**अध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन थे]

प्रश्न और उत्तर

(देखिये भाग १)

९.१५ म० पू०

काश्मीर के सम्बन्ध में वक्तव्य

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : श्रीमान् जम्मू तथा काश्मीर राज्य से सम्बन्धित मामलों के बारे में आप ने जो मूझे एक वक्तव्य देने का अवसर दिया उसके लिये मैं आप का आभारी हूं। इन मामलों में न केवल इस सदन को अपितु बाहर जनता को भी दिलचस्पी है तथा इसलिये श्रीमान् मैं आपकी अनुमति से इस सदन का थोड़ा सा समय लेकर न केवल वर्तमान स्थिति का वर्णन करुंगा अपितु इसकी पृष्ठभूमि पर भी कुछ प्रकाश डालूंगा क्योंकि हम प्रायः गई गुजरी बातों को भूल भी जाते हैं। जब तक हम उस पुरानी स्थिति को याद न करेंगे तब तक हमारे लिये वर्तमान स्थिति को समझना कुछ कठिन होगा।

जम्मू तथा काश्मीर राज्य बहुत से वर्षों तक उन लोगों के लिये एक मनभावना विहार स्थल था जिनके पास ऐसे विहार के साधन थे यद्यपि वहां की जनता गरीब थी फिर भी यह विश्व का प्रसिद्ध विहार स्थल बाहर के लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा। यह काश्मीर जो कई वर्ष तक राजनीतिक दृष्टिकोण से पिछड़ा रहा एक दम वर्तमान इतिहास के भवर में आ फंसा तथा उस समय वहां कई बातें—अच्छी तथा बुरी—हुई और स्वभावतः लोगों का ध्यान भी उस ओर गया। अब यह एक अन्तर्राष्ट्रीय मामला बन गया। हमारे लिये इसका महत्व इस से भी कुछ ज्यादा है क्योंकि हमारे तथा काश्मीर के आपसी सम्बंध न केवल पिछले एक हजार वर्षों से चले आ रहे हैं अपितु हाल ही की घटनाओं के कारण भी हम एक दूसरे के बिलकुल निकट आ गए हैं इसलिये मैं इसकी पृष्ठभूमि पर भी कुछ प्रकाश डालता हूं।

भूगोल की दृष्टि से सदन यदि इस पर ध्यान देगा तो इसे मालूम होगा कि काश्मीर भारत के दक्षिणी कोण अर्थात कन्याकुमारी से दो हज़ार मील से भी अधिक दूर है। काश्मीर समुद्र से भी लगभग एक हज़ार मील दूर है। भारत का एक भाग होते हुये भी यह भौगोलिक दृष्टि से एशिया के मध्य में स्थिति है। युगयुगान्तर से भारत के बड़े

[श्री जवाहर लालनेहरू]

बड़े कारवां इस राज्य से होते हुये मध्य एशिया को गए हैं। यह मूलतः भारत के साथ निकटतमरूप से सम्बद्ध है तथा गत दो हज़ार वर्षों से ऐसे चला आया है, विशेषकर राजनीतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण से। यह कई तरह से मध्य एशिया से भी मिला हुआ है। कितने लोग आज भी यह जानते हैं कि काश्मीर तिब्बत से भी आगे उत्तर दिशा में स्थित है तो हमें इस मामले के अन्य पहलुओं को एक तरफ रख के विशेष भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से इस पर विचार करना होगा।

तो जैसे कि मैंने निवेदन किया काश्मीर को इतिहास रूपी जल की तेज धार में डाल दिया गया। यह धार विश्व के अन्य भागों में बड़ी तेज़ी से बह रही है और कहीं कहीं उग्र रूप धारण कर रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि विश्व में हम सब लोग अथवा अधिकांश लोग शान्ति रूपी एक पतली दीवार के सहारे बैठे हैं जिसके गिर जाने का किसी भी समय खतरा हो सकता है। तथा यह कभी कभी गिर भी जाती है। आज प्रतिः के समाचारों से माननीय सदस्यों को मालूम हुआ होगा कि पश्चिमी एशिया के राज्यों में क्या हो रहा है, आकस्मिक राज विप्लव तथा अन्य बातें। शायद हम इस सम्बन्ध में यहां भारत में कुछ कुछ भाग्य शाली हैं क्योंकि बहुत सी बातों के बावजूद जिनकी कि कुछ माननीय सदस्य हम से शिकायत करें अथवा अपना विरोध प्रकट करें, यह बात मान ली गई है कि हमारी शासन-व्यवस्था में अथवा देश के मामलों में कुछ स्थिरता आ गई है तथा देश बिना किसी दरार के निरंतर प्रगति की ओर जा रहा है यह हमारे लिये सौभाग्य की बात है। परन्तु आज के संसार में कोई भी व्यक्ति शान्ति की इस दीवार में दरार पड़ने की बात को भूल नहीं सकता है। इसी पृष्ठ-भूमि को हमें याद रखना होगा।

अन्य भूत-पूर्व भारतीय राज्यों की तरह जम्मू तथा काश्मीर राज्य में भी जनता सामंतशाही के विरुद्ध संघर्ष करती रही तथा इसकी प्रेरणा उन्हों ने भारत के महान राष्ट्रवादी आन्दोलन से ली। वास्तव में वह उस महान आन्दोलन की शाखायें थीं तथा उनके सिद्धान्त तथा उद्देश्य भी इसी भारी आन्दोलन से तथा इसके महान नेता महात्मा गांधी से ग्रहण किये गए थे। गत बीस अथवा तीस वर्षों में भारत के विभिन्न राज्यों में जो भी आन्दोलन चल रहे थे उन में से जम्मू तथा काश्मीर राज्य की जनता का आन्दोलन सब से अधिक शक्तिशाली तथा संगठित था। इस की राज्य सरकार के साथ कई टक्करें हुईं जैसे कि अन्य राज्यों में भी हुई। इस आन्दोलन का निकटतम सम्बन्ध अखिल-भारत स्टेट पीपल्ज़ कान्फ्रेन्स से था। इस तरह से यह भारत के उस संयुक्त आन्दोलन का अंग बना जिसका देश के सभी राज्यों पर प्रभाव पड़ा। यही इसकी पृष्ठभूमि है।

भारत के अन्य राज्यों की तरह वहां भी इन वर्षों में राज्य प्रशासन तथा जनता में झगड़े हुये तथा वहां की लोक-प्रिय संस्था को भारी कष्ट तथा मुसीबतें झेलनी पड़ी। उन दिनों के बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है, परन्तु मैं कुछ हाल ही की बातों का उल्लेख करूंगा।

स्वतंत्रता तथा विभाजन के समय अथवा उस से कुछ पूर्व हमारे सामने छः सौ भारतीय राज्यों की विकट समस्या पेश आई। यह एक भयंकर समस्या थी तथा हमें इसे अत्यन्त ही शीघ्रता से हल करना था। ब्रिटिश सरकार की घोषणा में—जो कि मेरे विचार में जून १९४७ के शुरू में की गई थी—इन राज्यों के बारे में

स्थिति अस्पष्ट थी। हमें ब्रिटिश सरकार की घोषणा का यह भाग पसंद न आया क्योंकि इस से एक तरह से इन राज्यों में फ़ूट की भावना को प्रोत्साहन मिला। इन राज्यों में कुछ लोग—मैं राजे महाराजों की बात कर रहा हूं—यह समझने लगे कि वह अधिकांश रूप से अपने कार्यकलाप में स्वतंत्र होंगे।

जुलाई तथा अगस्त १९४७ के महीनों में हमें इस भारी समस्या का सामना करना पड़ा। सौभाग्यवश उन दिनों सरदार पटेल जीवित थे, वह इसे हल करने में सामर्थ्यवान थे। तो क्या हुआ, स्वतंत्रता से पहले के उन दो तीन सप्ताहों में कुछेक राज्यों को छोड़ के—हैदराबाद, काश्मीर तथा दो एक छोटे मोटे राज्यों को छोड़ के—सभी के सभी राज्य भारतीय संघ में शामिल हुये। जैसे कि सदन को मालूम है, हैदराबाद का मामला एक विशेष प्रकार का था। काश्मीर का मामला चल रहा है। शेष कुछेक राज्य जो रह गए थे वह कुछ ज्यादा महत्व के नहीं थे। इस कार्य में हमें तत्कालीन भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माऊंटबेटन ने काफी सहायता दी। इसका बहुत प्रभाव पड़ा क्योंकि इन राज्यों के शासकों को इस बात का निश्चय हुआ कि वह भारत के विरुद्ध ब्रिटिश सरकार की सहायता पर निर्भर नहीं रह सकते हैं। इस तरह से उन्हें भारत की स्वतंत्रता का—जिसका कि उन्हें काफी भय था—सामना करना पड़ा। उन्हें अपनी जनता का सामना करना पड़ा क्योंकि वह असन्तुष्ट थी तथा परिवर्तन चाहती थी। और जब उनके अन्तिम आश्रय, ब्रिटिश सरकार, ने भी उन्हें सहायता देने से इन्कार किया तो उनके पास चारा नहीं रहा और वह तुरन्त भारतीय संघ में शामिल होने लगे। उन्हों ने अपने तीन विषय अर्थात रक्षा, वैदेशिक मामले तथा संचरण व्यवस्था संघ सरकार के हाथ सौंप दिए। सभी राज्यों ने ऐसा किया। तो १५ अगस्त १९४७ को भारतीय उपनिवेश ने हैदराबाद, काश्मीर तथा दो एक छोटे राज्यों को छोड़ के शेष सभी राज्यों सहित काम करना शुरू किया।

काश्मीर के बारे में प्रश्न १५ अगस्त से भी पहले, जुलाई में हमारे सामने अनौपचारिक रूप में आया। हम ने उस समय जो सलाह दी वह यह थी कि कई कारणों से काश्मीर की स्थिति विशेष प्रकार की थी। मैं यहां यह कहना चाहता हूं कि अन्य राज्यों के सम्बन्ध में भी भारत सरकार ने अपनी नीति स्पष्ट रूप से घोषित की थी—राज्य मंत्री सरदार पटेल ने इसकी घोषणा की थी—कि जहां कहीं जनमत के बारे में संदेह हो वहां जनता से राय ली जाये। सामान्यतः इस में कोई संदेह नहीं था कि यह राज्य भारतीय संघ का अंग बनना चाहते हैं—इनके सम्बन्ध में राय लेने का कोई प्रश्न ही नहीं था—परन्तु जहां कहीं संदेह था हम ने घोषणा की कि हम वहां के लोगों से राय पूछेंगे और जो उनका निश्चय होगा उसे स्वीकार करेंगे। वह नीति तथा वह सिद्धान्त भारत के सभी राज्यों के लिये था। परन्तु ऐसा कोई मामला ही नहीं था जहां यह प्रश्न उठता, यह एक अलग बात है। तो जिस समय काश्मीर का प्रश्न हमारे सामन अनौपचारिक रूप से आया, हम ने महाराजा की सरकार को तथा वहां की लोकप्रिय संस्था, नैशनल कान्फ्रेंस को जिनके साथ हमारे कुछ सम्पर्क पहले ही थे यह सलाह दी कि काश्मीर का

[श्री जवाहरलाल नेहरु]

मामला एक विशेष मामला है तथा जल्दबाजी से काम करना अच्छा नहीं होगा। हमने जो जनता से राय लेने का सिद्धान्त निर्धारित किया था वह विशेषकर काश्मीर पर लागू होता था। यह देश के विभाजन से पहले की बात है जब स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हुई थी। हम ने यह बात स्पष्ट कर दी कि यदि वहां का महाराजा तथा उसकी सरकार भारत में प्रवेश करना भी चाहे, तो हम उस से भी बढ़ कर कोई और चीज चाहेंगे, और वह था जनता का अनुमोदन। हम चालबाजी से कोई कागजी फायदा नहीं चाहते थे, हम जनता के हृदय को मोह लेना चाहते थे, तथा वास्तविक हार्दिक मेल चाहते थे। वास्तव में इसकी नींव बहुत पहले डाल दी गई थी, तथा यह नींव किसी वैधानिक अथवा संवैधानिक दस्तावेज़ से अधिक चिरस्थायी हो सकती है। नींव हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनों की थी, जो जहां तहां चल रहे थे, जिन में हम ने संगठित रूप से काम किया है तथा पीड़ा उठाई है। नींव हमारे सिद्धान्तों के रूप में है जिनके लिये हम ने संघर्ष किया है। वास्तिविक आधार तो यही था। तो जुलाई १९४७ में हम ने यह बात स्पष्ट कर दी कि जम्मू तथा काश्मीर राज्य को जल्दी में कोई निश्चय करने के लिये विवश न करना चाहिये; यद्यपि वहां के नेता वैयक्तिक रूप इस ओर झुकाव रखते थे, परन्तु वह अपने लोगों को भी जानते थे तथा उन्हों ने सुझाव दिया कि इस सम्बन्ध में जनता की ओर से पहल होनी चाहिये तथा केवल महाराजा की सरकार की ओर से न होनी चाहिये तभी तो यह सम्बन्ध चिरस्थायी हो सकते हैं। हम ने यह बात पूर्णतः मान ली तथा महाराजा की सरकार तथा लोकप्रिय संस्था के नेताओं को सूचना दी कि वह प्रवेश के मामले में जल्दबाजी से काम न लें तथा उस समय तक प्रतीक्षा करें जब तक कि लोगों की राय जानने का कोई उपाय ढूंढ न निकाला जाये। उस समय जिस बात की हम ने कल्पना की वह यह थी कि वहां एक प्रकार की संविधान सभा का चुनाव हो। वास्तव में हम ने दूसरे स्थानों के लिये भी ऐसा ही सोचा था जहां कि इस प्रकार का प्रश्न उत्पन्न होता। दरम्यानी काल के लिये हम ने मश्वरा दिया कि भारत तथा पाकिस्तान (जिसका कि प्रादुर्भाव हो रहा था) के साथ यथापूर्व करार किये जाएं जिस से कि कुछ मामूली फेर बदल के सिवाय किसी महत्वपूर्ण परिवर्तन की आवश्यकता न पड़े, तथा फिर फुर्सत से इस मामले पर अगरेतर विचार किया जाये।

१५ अगस्त १९४७ के बाद हमारे पास बहुत कम फुर्सत थी। पाकिस्तान में, तथा पाकिस्तान की सीमा के पास के भारतीय राज्यों में विप्लव हुये तथा हमें उस काल में बड़ी संवेदना में से गुजरना पड़ा। हम काश्मीर अथवा किसी और मामले के बारे में सोच नहीं सकते थे। हमें तात्कालिक समस्याओं का निवारण करना था तथा यही समस्याएं हमें प्रातः से सायं तक घिरे रखती थीं।

सदन को याद होगा कि अक्तूबर १९४७ के अन्तिम सप्ताह में अकस्मात काश्मीर पर पाकिस्तान से हमला हुआ। पाकिस्तान में प्रायः यह कहा गया कि भारत काश्मीर के नेताओं के सहयोग से उस राज्य के विभिन्न भागों, पुणछ आदि में गड़बड़ कराने का षड़यंत्र रचे हुये था। यह भी कहा गया है कि हमें इन सभी घटनाओं की, आक्रमण आदि की, जानकारी पहले ही प्राप्त थी। सच तो यह है कि

जब हम ने पहली बार इस आक्रमण के बारे में सुना तो हम चकित रह गए। यह समाचार भी हमारे पास ठीक तरह से नहीं पहुंचा क्योंकि कोई संचरण व्यवस्था नियमित ढंग से काम नहीं कर रही थी। तथा ज्योंही हमें इसका पता लगा हम हैरान हुये। एक दो दिन तक हम ने इस पर गम्भीरता से विचार किया; हमें मालूम नहीं था कि हम इस सम्बन्ध में क्या कुछ कर सकते थे। हम वहां से बहुत दूर थे। सारा काम कठिन था। हम अपनी परेशानियों में बुरी तरह उलझे थे। ज्योंही यह आक्रमण बढ़ता गया, हमारे पास लूट मार तथा अग्निकांड के समाचार पहुंचे तथा स्वभावतः सारे भारत में एक प्रकार का दर्द पैदा हुआ। जनता में वह दर्द की भावना बढ़ गई तथा सदन इस बात की कल्पना कर सकता है कि जम्मू तथा काश्मीर राज्य में जनता की भावना उस समय क्या थी। उस समय हमें महाराजा की सरकार तथा काश्मीर की लोकप्रिय संस्था से अलग अलग सहायता की अपीलें प्राप्त हुई। वह भारत से सहायता चाहते थे तथा इस में प्रवेश करना चाहते थे। हम इन अपीलों पर बहुत देर तक गंम्भीरता से विचार करते रहे तथा हमने इस की उपलक्षणाओं पर विचार करने की कोशिश की। हमें शीघ्रता से कोई न कोई फैसला करना था। मुझे याद है कि २७ अक्तूबर को दिन भर की बैठक के बाद सायं को हम इस निश्चय पर पहुंचे कि सभी खतरों के बावजूद हम उनकी अपील का नकारात्मक उत्तर नहीं दे सकते हैं तथा हमें उनकी सहायता पर जाना होगा। यह कोई आसान काम नहीं था, क्योंकि हम केवल वायु-मार्ग से ही वहां जा सकते थे। हमें यह भी पता नहीं था कि क्या वहां का 'केवल' तथा अस्थायी हवाई-अड्डा शत्रुओं के हाथ में है अथवा अभी खाली है। वहां जल्दी पहुंच जाने का और कोई रास्ता नहीं था तथा समय एक महत्वपूर्ण बात थी क्योंकि आक्रमणकारी दिन प्रति दिन तबाही मचाते जाते थे। हम ने उन्हें सहायता देने का निश्चय किया तथा इस निश्चय के समय से केवल बारह घंटे के अन्दर अन्दर हमारी सेना ने वायु-मार्ग द्वारा काश्मीर की ओर अभियान किया। यह हमारी सेना, तथा नौ-सेना के कार्य का एक सुन्दर नमूना था। वह ठीक मौके पर पहुंचे; यदि केवल २४ घंटे का विलम्ब होता तो हवाई अड्डा शत्रु के हाथ में होता तथा उस से स्थिति और भी बिगड़ जाती। हवाई अड्डे से कुछ ही मील की दूरी पर वह शत्रु पर टूट पड़े। आक्रमणकारी पीछे हट गए। हम ने समझा कि आक्रमणकारी कबाइली लोग हैं जिन्हें निस्सन्देह ही पाकिस्तान ने उकसाया है। पहले तो हम ने यह सोचा था कि इन्हें निकाल देने में हमें कोई बड़ी सैनिक कार्यवाही नहीं करनी पड़ेगी। यहां मैं यह भी बता देना चाहता हूं कि हमारी सेना के वहां पहुंचने से तीन अथवा चार दिन पहिले काश्मीर की शासन-व्यवस्था पूर्णतया भंग हो चुकी थी। कोई प्रशासन नहीं था। वहां, मेरे विचार में पुलिस जैसी कोई चीज़ भी नहीं रह गई थी। इन नाजुक घड़ियों में जब कि निर्दयी शत्रु सुप्रसिद्ध शहर श्रीनगर की ओर बढ़ रहा था, श्रीनगर की जनता को बचाने के लिये कोई भी व्यक्ति नहीं था। केवल जनता की कोशिशों ने, नैशनल कांफ्रेंस के स्वयंसेवकों की कोशिशों ने शहर को बचाया। यह नहीं कि उन्हों ने शत्रु का मुकाबिला किया—उनके पास ऐसा करने के लिये कोई हथियार न थे—अपितु उन्हों ने जनता को आवश्यक नैतिक साहस प्रदान किया; तथा यह एक स्मरणीय बात है कि जब शत्रु शहर से केवल दस अथवा बारह मील

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

दूर था, श्रीनगर में एक भी दुकान बंद न हुई थी। वह काम कर रहे थे। यह जनता तथा नैशनल कांफ्रेंस के उत्साह को प्रकट करता है जो कि उन्हों ने गम्भीर आपात के समय दिखाया। हम न इन आक्रमणकारियों को पीछे हटाया तथा ज्यों ही हम इन्हें ऊड़ी तक—जहां कि मैं केवल एक ही वर्ष पहिले महाराजा की सरकार का बन्दी था—हटाते गए, हमारी सेना को कुछ ही दूर मालूम हुआ कि वह कबाइली आक्रमणकारियों का सामना नहीं कर रही है अपितु पाकिस्तानी सेना का मुकाबिला कर रही थी। यह एक भिन्न मामला था तथा इसका एक भिन्न तरीके से निवारण करना था। यहां तो मैं केवल इतना ही कहूंगा कि हमारी सेना उस स्थान से आगे न बढ़ी।

उस समय से—यह नवम्बर १९४७ था—वहां तथा राज्य के अन्य स्थानों पर लड़ाई जारी रही ; जम्मू की तरफ से, काश्मीर की तरफ से तथा उत्तर की ओर। यह लड़ाई डेढ़ वर्ष तक जारी रही। दिसम्बर में जब कि हमें पता चला कि हम पाकिस्तानी सेना का सामना कर रहे हैं, हम ने महसूस किया कि मामला उस से भी बढ़ जाने की सम्भावना है जितने की कि हमने कल्पना की थी तथा उससे भारत तथा पाकिस्तान के बीच एक पूर्ण युद्ध छिड़ जाने की आशंका है।

मैं चाहता हूं कि सदन उस समय को याद रखे, क्योंकि हमें प्रत्येक घटना पर उसी प्रसंग में विचार करना चाहिये। यह वह समय था जब कि हम पाकिस्तान बनने के बाद तथा उस सारी गड़बड़ के बाद, पुनः स्थापित होना चाहते थे तथा उसके अलावा भी, जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हम यथा-सम्भव युद्ध नहीं चाहते हैं। जब हमने देखा कि इससे दोनों देशों के बीच पूर्ण युद्ध छिड़ जाने की आशंका है तो हमनें इस मामले को संयुक्त राष्ट्र संघ में पेश करने का निश्चय किया, तथा यह मेरे विचार में दिसम्बर १९४७ में हुआ। हम ने संयुक्त राष्ट्र संघ से यह कहा कि कुछ कबाइली लोगों ने काश्मीर पर आक्रमण किया है तथा निर्दयता का प्रदर्शन किया है आदि आदि, वह पाकिस्तानी इलाके से हो के आये हैं तथा पाकिस्तान ने उन्हें ऐसा करने के लिये उकसाया है तथा सहायता दी है। हमारी संयुक्त राष्ट्र संघ अथवा सुरक्षा परिषद से प्रार्थना यह थी कि उन्हें पाकिस्तान को बता देना चाहिये कि वह इन लोगों की सहायता न करे और न ही इन्हें उकसाये। हमारी उनसे यही एक प्रार्थना थी, यही एक सवाल था। बाकी हमने प्रस्थापना की कि हम परिस्थिति का स्वयं ही निपटारा कर लेंगे। हमारा अभिप्राय यह था कि यह युद्ध इस तरह से फैलने न पाये। हमने अवश्य ही पाकिस्तान से भी प्रत्यक्ष रूप से यह प्रश्न पूछा था। परन्तु पाकिस्तान ने दृढ़ता से इस बात से इन्कार किया कि उनका इस मामले से कोई सम्बन्ध है। यह एक अजीब सी बात थी कि किस तरह से हज़ारों लोग पाकिस्तानी इलाके में से गुजरें तथा पाकिस्तान सरकार को इसका पता भी न चले। कुछ भी हो उन्होंने इस बात से इन्कार किया कि कबाइली लोगों ने उनकी सहायता से पाकिस्तान से होकर काश्मीर की ओर अभियान किया है। तथा उन्होंने उस समय तथा कुछ और महीनों में भी इस बात से पूर्णतया इन्कार किया कि पाकिस्तानी सेना अथवा पाकिस्तानी सेना के किसी भाग ने काश्मीर पर किये गये आक्रमण में कोई हिस्सा लिया है। बाद में हमें इस सम्बन्ध में काफी साक्ष्य

प्राप्त हुई तथा दिल्ली में हमारे रक्षा विभाग ने एक अजायबघर खोला था जिस में पकड़ी गई सभी प्रकार की सामग्री, सैनिकों की डायरियां, सैन्य-चिन्ह आदि रखे गए थे, जिस से कि स्पष्ट होता था कि पाकिस्तानी सेना ने किस तरह से इस आक्रमण में भाग लिया है।

१९४८ की सर्दियों में यह सैनिक कार्यवाहियां बड़े जोरों से चलती रहीं। सर्दियों में १५००० फुट की ऊंचाई पर स्थित काश्मीर की घाटियों में जाना कोई आसान काम नहीं। इसके साथ साथ सुरक्षा परिषद में भी बातचीत चलती रही। पहले पहल उन्होंने कई महीनों तक न्यूयार्क में इस पर तर्क-वितर्क किया। हम हैरान थे, क्योंकि हमारा एक सीधा सा प्रश्न था तथा इसका उत्तर भी सीधा ही था। हम ने उन से यह नहीं कहा था कि वह हमारी बात मान लें, यदि इस पर कोई आपत्ति उठाई जाती, जैसे कि पाकिस्तान ने उठाई थी, स्पष्टतया उनके लिये तरीका यह था कि वह इस बात की वास्तविकता मालूम करते कि आया हम सत्य कह रहे थे अथवा पाकिस्तान सत्य कह रहा था। चर्चा, बातचीत तथा मध्यस्थता के इन चार पांच वर्षों में हमारे उस सीधे से प्रश्न का अभी तक कोई उत्तर नहीं दे दिया गया है और न ही इस पर उस दृष्टि से विचार किया गया है। इसका एक प्रकार से अप्रत्यक्ष रूप से उत्तर दिया गया। यह उत्तर संयुक्त राष्ट्र आयोग, जो कि १९४८ में यहां आया था, के संकल्पों के रूप में दिया गया जब कि उन्होंने कहा कि पाकिस्तानी सेना के काश्मीर में होने के कारण एक नई स्थिति उत्पन्न हुई है। उन्होंने ऐसा कहा। इस वक्तव्य से कुछ ही समय पहले पाकिस्तान सरकार दृढ़ता से इस बात से इन्कार करती रही कि उसकी सेनाएं काश्मीर में हैं। एक निराधार बात को तथा साफ़ झूठ को बार बार दुहराने की वह एक अजीब घटना थी, तथा संयुक्त राष्ट्र-संघीय आयोग भी इसी निष्कर्ष पर पहुंचा था।

३१ दिसम्बर १९४८ को दोनों पक्षों ने युद्ध बंद करना मान लिया। उस समय से किसी बड़े पैमाने पर कोई सैनिक कार्यवाही नहीं हुई है। मामूली छापे हुये हैं; परन्तु कोई गम्भीर लड़ाई नहीं हुई है। उस समय से यही कुछ स्थिति है। स्थानीय गड़बड़, चोरी छिपे घुस के आना जैसी बातों को—ऐसी बहुत सी बातें हैं—छोड़ के सारा दृश्य बदल गया है। अब संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् संयुक्त राष्ट्रीय आयोग, संयुक्त राष्ट्रीय प्रतिनिधि जो कि यहां समय समय पर आते रहे हैं, मंच पर दिखाई देते हैं। मैं उस इतिहास में नहीं जाऊंगा।

अन्तिम मध्यस्थ डा० ग्राहम हैं। वह यहां दो बार आये हैं तथा उन्होंने हमारे तथा पाकिस्तान के साथ लम्बी बात चीत की है और वह इस समय भी इस वार्ता को न्यूयार्क में जारी रखे हुये हैं। उन्होंने अपनी पूछ ताछ राज्य के असैनीकरण तक ही सीमित रखी। इसे मुश्किल से एक अच्छा शब्द कहा जा सकता है; किन्तु फिर भी सुविधा के लिये हम इसे प्रयोग में ला सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ का आयोग जिस समय यहां था उस समय हम ने यह स्थिति स्वीकार की थी। शान्ति प्राप्त करने के लिए हम ने यह बात मान ली थी कि पहिले पहल पाकिस्तानी सेना को, जिस में कि उसकी सहायक सेना भी शामिल हैं, उस राज्य के क्षेत्र का एक एक चप्पा खाली करना चाहिये। हम ने इस बात पर काफी

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

ज़ोर डाला था, केवल सैनिक कारणों के लिये नहीं, अपितु नैतिक कारणों के लिये भी। उन्हें वहां रहने का कोई अधिकार न था। उन्हों ने आक्रमण किया था अतः उन्हें वह खाली करना था। यदि पाकिस्तान काश्मीर के भारत में शामिल होने पर संदेह करता है अथवा इसे स्वीकार नहीं करता है--सदन को मालूम है कि उन्होंने इसे जाली प्रवेश कहा है तथा मैं इस पर कुछ समय बाद प्रकाश डालूंगा—फिर भी उन्हें काश्मीर में ठहरने का कोई अधिकार नहीं, यह बात स्पष्ट है, यह बात निश्चित है; इसका वहां कोई नैतिक, राजनीतिक अथवा संवैधानिक अस्तित्व नहीं। पाकिस्तान का यह काम नहीं था कि वह अपनी सेनाएं वहां भेज दे अथवा दूसरों को आक्रमण करने के लिए उकसाये। इसलिये हम ने पाकिस्तान से समझौता करने के किसी उपाय को क्रियान्वित करने से पूर्व यह आवश्यक शर्त रखी कि वह उस क्षेत्र से पूर्णतया अपनी सेनाएं निकालें जिस पर कि उन्हों ने हमला करके कब्जा कर लिया है। यह बात काश्मीर कमीशन के सकल्प में मान ली गई थी।

दरम्यानी काल में उस राज्य के पाकिस्तान अधिकृत पश्चिमी भाग में तथा-कथित आज़ाद काश्मीर सेनाओं को संगठित किया गया। उन्हों ने स्थानीय व्यक्तियों को भर्ती करके तथा-कथित 'आजाद काश्मीर फौज' बनाई। १९४८ में हमें इस सम्बन्ध में कुछ अधिक जानकारी नहीं थी। हम ने मांग की कि इन व्यक्तियों को विघटित करके निःशस्त्र कर दिया जाये। हम उन्हें वहां से चले जाने के लिये नहीं कह सकते थे क्योंकि वह उसी राज्य के रहने वाले थे। इसलिये हम ने मांग की कि उनका विघटन करके उन से हथियार ले लिये जायें। काश्मीर कमीशन ने बाद में अपने संकल्प में इस विचार को इन शब्दों रखाः "आज़ाद काश्मीर सेनाओं का बड़े पैमाने पर विघटन तथा निःशस्त्रीकरण।" इस विषय पर हमारे तथा पाकिस्तान के बीच मतभेद रहा है। हम ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि इसका अर्थ यह है कि आज़ाद काश्मीर फौज को यथासम्भव पूर्णतया विघटित करके निःशस्त्र कर दिया जाये। कुछ लोग हथियार डाल दें, कुछ इन्हें छिपायें वह दूसरी बात है। शासकीय रूप से यह पूर्ण होना चाहिये। पाकिस्तान इस निर्वचन से सहमत नहीं हुआ। 'युद्ध-बंदी करार' को अस्थायी शान्ति संधि में बदलने में यही कठिनाई है। पाकिस्तान को यही कुछ करना था। जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हम ने राज्य क्षेत्र से अपनी विपुल सेना को निकाल लेना मान लिया। "विपुल" शब्द को नोट कर लीजिये। किन्तु शर्त यह थी कि हम काश्मीर की भीतरी तथा बाहरी सुरक्षा को बनाये रखने के लिये वहां काफी सेना रखेंगे। सदैव यह शर्त रखी गई थी कि हम पर्याप्त सेना रखेंगे तथा इसका निश्चय भी हम ही कर सकते थे। हम ने कहा था कि हम काश्मीर से अपनी विपुल सेना को निकाल लेंगे जब पाकिस्तानी सेनाएं पाकिस्तान को चली गई होंगी। हम ने महसूस किया कि हम ऐसा कर सकते थे। अधिकांश रूप से स्थिति यही कुछ थी। इसके बाद युद्ध-बन्दी हुई तथा यह वार्ता चल रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ के कमीशन ने अगस्त १९४८ तथा जनवरी १९४९ में जो संकल्प पारित किये थे, यह वार्ता उन्हीं के निर्वचन पर रुक गई है। मैं विस्तार में नहीं जाऊंगा।

डा० ग्राहम, अब, इस तथा-कथित असैनिकीकरण समस्या के निवारण के पीछे पड़े हुए हैं। एक समय उन्हों ने १२

प्रस्थापनाएं पेश कीं। जहां तक मुझे याद है हम ने आठ स्वीकार कर ली हैं; एक अथवा दो में हम ने कुछ परिवर्तन करने की मांग की है तथा शेष एक अथवा दो को हम ने बिल्कुल स्वीकार नहीं किया है।

१९४८ तथा १९४९ में हम ने संयुक्त राष्ट्र संघ के कमीशन के दो प्रस्ताव स्वीकार किये थे। दरम्यानी काल में कई बातें हुई। परन्तु बाद में सुरक्षा परिषद ने एक संकल्प पारित किया जिसे कि हम ने स्वीकार नहीं किया है; तथा हम ने सुरक्षा परिषद को यह साफ बता दिया कि हम उस संकल्प को स्वीकार नहीं कर सकते हैं क्योंकि यह उन सिद्धान्तों के विरुद्ध था जिन्हें कि हम ने अपनाया है; यह उन आश्वासनों के विरुद्ध था जो कि हम ने अपनी जनता को तथा काश्मीर की जनता को दे दिये थे; तथा यह काश्मीर की सुरक्षा के लिये हमारी ज़िम्मेदारी के विरुद्ध भी था। हम ने महसूस किया कि यह उन संकल्पों के विरुद्ध भी था जो कि सुरक्षा परिषद ने काश्मीर कमीशन के संकेत पर पास किये थे। इसलिये हम ने कभी भी उस सकल्प को अथवा उसके किसी भाग को स्वीकार नहीं किया। डा० ग्राहम इसी संकल्प के सिलसिले में नियुक्त किये गए। हम ने डा० ग्राहम को यह बात स्पष्ट कर दी....

पंडित एल० के० मैत्रा (नवद्वीप): इस से पहले डिक्सन रिपोर्ट पेश हुई थी।

श्री जवाहरलाल नेहरू: मैं इन सभी मामलों के विस्तार में नहीं जाता हूं। बीच बीच में और भी लोग आये। मैं केवल यह कह रहा हूं कि हम ने उस संकल्प को स्वीकार नहीं किया। परन्तु सुरक्षा परिषद में तथा अन्य स्थानों पर हमारा सदैव यह दृष्टिकोण रहा है कि हम सहर्ष किसी भी व्यक्ति के साथ विशेष कर संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधि के साथ इस मामले पर चर्चा करने के लिये तैयार हैं। हम उसे मध्यस्थ के रूप में स्वीकार करने के लिये तैयार हैं, परन्तु हम कोई भी ऐसी बात मानने के लिये तैयार नहीं जो कि हम पर ठोंसी जाये। तथा न ही हम किसी ऐसी बात को मानने के लिये तैयार हैं जो कि इस विषय में हमारी ज़िम्मेदारियों के विरुद्ध जाती हो। जब डा० ग्राहम यहां आये, वह एक मध्यस्थ के रूप में आये। उन्होंने यहां ठहरने के दौरान में कभी भी उस संकल्प का उल्लेख नहीं किया जिसे कि हम ने रद्द किया था। तो उन्होंने अपना सारा ध्यान निसैनीकरण पर लगाया तथा यद्यपि हम ने उनकी कई एक बातें मान लीं, फिर भी पाकिस्तान के विचार में तथा हमारे विचार में अन्तर रहा है तथा यह अभी तक नहीं मिटा है।

मैं डा० ग्राहम की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता हूं; विशेषकर उनके असाधारण धैर्य को देख कर तथा उनके सच्चे प्रयत्नों को देखकर। उन्होंने अधिकाधिक प्रयत्न किया है; कुछ एक मामलों में उन्होंने प्रगति भी की है। लेकिन फिर भी एक अन्तर रह ही जाता है। जहां तक हमारा सम्बन्ध है, मैं कह सकता हूं कि हम ने भी काफी धैर्य किया है, हमारा धैर्य दूसरों से कुछ कम नहीं। अधीरता का परिणाम बुरा होता है। तो यह वार्ताएं जारी हैं और समाचार पत्रों में कुछ समाचार निकलते रहते हैं। कभी वह सच होते हैं कभी आंशिक रूप से सच होते हैं तथा कभी आंशिक रूप से असत्य होते हैं। हमारे लिये ऐसे समाचारों का निवारण करना कठिन हो जाता है।

अब हम इस मामले के अन्य पहलुओं पर विचार करेंगे। १९४८ में काश्मीर के सम्बन्ध में तथा अन्य राज्यों के सम्बन्ध में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

स्थिति यह थी कि उन्हों ने अपने तीन मुख्य विषय—विदेशी मामले, रक्षा तथा संचरण व्यवस्था संघ सरकार के हाथ सौंप दिये। फिर अन्य राज्यों का निकटतम एककीरण शुरू हुआ। तथा इस लक्ष्य की प्राप्ति भी अधिकांश रूप से सरदार पटेल के कहने पर हुई। तो इस तरह से हम ने भारत के भूत-पूर्व राज्यों तथा भूतपूर्व प्रान्तों के बीच भेद भाव मिटा दिया। यह ठीक है कि अस्थायी रूप से कुछ राज्य भाग (क) राज्य कहलाने लगे, कुछ राज्य भाग (ख) राज्य कहलाने लगे तथा कुछ भाग (ग) राज्य कहलाने लगे। परन्तु यह एक बिल्कुल अस्थायी व्यवस्था है; इसका अन्त होगा, इसका अन्त होना चाहिये तथा इसका अन्त हो रहा है। वैसे तो पुराने प्रान्तों तथा राज्यों में जो अन्तर था वह समाप्त हो गया तथा भारत एक अधिक संगठित राज्य बन गया है।

जब कि एकीकरण का यह काम अन्य राज्यों के सम्बन्ध में हो रहा था; काश्मीर के सम्बन्ध में कई कारणों से जान बूझ कर यह नहीं हुआ। एक कारण यह था कि सारी स्थिति तरल अवस्था में थी क्योंकि मामला संयुक्त राष्ट्र संघ के सामने था। दूसरा कारण जो इतना ही महत्वपूर्ण था यह था कि शुरू से ही हम ने यह बात मान ली थी कि काश्मीर की स्थिति कुछ भिन्न है। तीसरे शुरू से ही हम ने यह बात दुहराई थी कि काश्मीर की जनता की सम्मति के बिना काश्मीर के सम्बन्ध में कोई भी पग नहीं उठाया जायगा। तो काश्मीर ने केवल इन तीन विषयों में जान बूझ कर भारत में प्रवेश किया। जब मैं तीन विषयों का ज़िक्र करता हूं तो हमें याद रखना चाहिये कि प्रत्येक विषय एक विशिष्ट प्रकार के विषयों की श्रेणी है। यह एक छोटा विषय नहीं, अपितु विषयों की एक श्रेणी है—यदि आप विस्तार में जायेंगे। हम ने इसे हाथ न लगाया। तथा सरदार पटेल इस सारे समय में इन विषयों का निवारण कर रहे थे।

यह सारा सिलसिला, मेरे विचार में नवम्बर १९४९ में समाप्त हुआ जब की हम संविधान सभा में अपना संविधान बना रहे थे। हम सारी स्थिति को अस्पष्ट तथा तरल अवस्था में नहीं छोड़ सकते थे। जम्मू तथा काश्मीर के सम्बन्ध में संविधान में कुछ न कुछ ज़िक्र करना ही था। सरदार पटेल को यह समस्या पेश आई। वह इस सम्बन्ध में ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहते थे, वह इसे विभिन्न बातों के कारण अनिश्चित अवस्था में रखना चाहते थे तथा उन सम्बन्धों को, वैधानिक तथा संवैधानिक सम्बन्धों को धीरे धीरे बढ़ाना तथा दृढ़ करना चाहते थे। यही हमारी भी राय थी। इसका परिणाम यह हुआ कि जम्मू तथा काश्मीर के सम्बन्ध में हमारे संविधान में एक तरह का असामान्य उपबन्ध रखा गया। यह उपबन्ध अब भाग २१, अस्थायी तथा अन्तर्कालीन उपबन्ध, के अनुच्छेद ३७० में रखा गया है। यदि आप उस अनुच्छेद को पढ़ लेंगे तो आप को मालूम होगा कि संविधान के अन्तिम रूप देने के समय स्थिति क्या थी। तथा मैं निवेदन करता हूं कि जम्मू तथा काश्मीर और भारतीय संघ के पारस्परिक सम्बन्धों की परिभाषा उसी अनुच्छेद ३७० में दी गई है। उस के बाद २६ जनवरी को राष्ट्रपति ने इस अनुच्छेद के निबन्धनों में एक आदेश जारी किया जिस में उन विषय-श्रेणियों तथा संविधान के भागों की परिभाषा दी गई जो कि जम्मू तथा काश्मीर राज्य पर लाग होने चाहिये। संविधान के तैयार

होने के समय से काश्मीर के सम्बन्ध में स्थिति अनुच्छेद ३७० तथा इसके बाद जारी किये गए राष्ट्रपति के आदेश में दी गई है। अनुच्छेद ३७० स्पष्टतया एक अन्तर्कालीन उपबन्ध था तथा राष्ट्रपति बाद में उस में कुछ फेर बदल कर सकता था अथवा इसे बढ़ा सकता था। उद्देश्य केवल यह था कि यदि किसी फेर बदल की आवश्यकता पड़ती, तो हमें अपने संविधान में संशोधन करने का चक्रदार काम न करना पड़ता; किन्तु राष्ट्रपति को काश्मीर के सम्बन्ध में इस में कोई विषय अथवा विषय का भाग और बढ़ा देने का अधिकार दे दिया गया। परन्तु अनुच्छेद ३७० में उस पुराने सिद्धान्त को दुहराया गया तथा इस बात पर जोर दिया गया कि जो भी फेर बदल करने की आवश्यकता होगी, वह जम्मू तथा काश्मीर राज्य की संविधान सभा के अनुमोदन से होगा। जब हम ने यह उपबन्ध अपने संविधान में रखा, उस समय जम्मू तथा काश्मीर राज्य में कोई संविधान सभा न थी परन्तु हम ने इसका पूर्वानुमान लगाया था। संविधान सभा के विद्यमान न होने की दशा में भी हमें ऐसे किसी परिवर्तन के सम्बन्ध में जम्मू तथा काश्मीर सरकार का अनुमोदन प्राप्त करना था, यही कुछ स्थिति थी।

विभाजन से पूर्व से ही हमारी यह नीति रही है कि हम कोई पग ऐसा नहीं उठायेंगे जिसे कि दबाव अथवा जबर्दस्ती समझ लिया जाये, तथा हर एक बात सम्बन्धित लोगों की सम्मति से होनी चाहिये। मूल स्थिति तो यही थी। इसके अलावा जब यह एक अन्तर्राष्ट्रीय मामला बन गया, हम कोई भी ऐसी वैसी बात नहीं करना चाहते थे जिस से कि यह समझ लिया जाता कि हम संयुक्त राष्ट्र संघ को दिये गये वचनों अथवा आश्वासनों को पूरा नहीं कर रहे हैं। यह तरल स्थिति जारी रही तथा हमारे आपसी सम्बन्ध भी उस हद तक तरल अवस्था में थे जहां तक विधि थी; नहीं तो कोई कठिनाई नहीं थी। हम अपने काम को चलाते गए। यह एक, दो अथवा तीन वर्ष ऐसे ही चलता रहता। हम मित्रता-पूर्वक तथा सहयोग से काम चला रहे थे। कोई कठिनाई नहीं थी; कुछ छोटे मोटे मामले थे, जिन्हें कि हम पारस्परिक विचार विमर्श के बाद सुलझाते थे।

इसके बाद काश्मीर की संविधान सभा का प्रादुर्भाव हुआ। हमारी शुभ इच्छाएं इस के साथ थीं। जब इस बात का उल्लेख किया गया कि काश्मीर संविधान सभा के चुनाव कराये जायेंगे तो कई विदेशों में इस विचार का विरोध किया गया, स्वयं सुरक्षा परिषद में इसकी गूंज सुनी गई। मुझे कहने की आवश्यकता नहीं कि पाकिस्तान ने इसे बहुत ही बुरा मनाया, कुछ भी हो मुझे कोई कारण दिखाई नहीं दिया तथा न अब दिखाई देता है कि क्यों कोई बाहर का देश भारत तथा काश्मीर के आपसी आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करे। यदि दूसरे देशों ने इस पर आपत्ति की; तो हम ने उनकी आपत्ति पर भी आपत्ति की तथा इस तरह हम काम चलाते रहे। तो इस संविधान सभा का प्रादुर्भाव गत वर्ष हुआ। इस ने बहुत कुछ किया है, कई महत्वपूर्ण सुधार पुरःस्थापित किये हैं। इस के बाद इस ने जम्मू तथा काश्मीर राज्य के लिये संविधान बनाने का काम हाथ में लिया। इसके तुरन्त बाद ही यह समस्या पेश आई। ठीक है कुछ समय के लिये आप अनिश्चित स्थिति रखें परन्तु, जब आप कोई विधान बना रहे हों तो आप को

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सभी बातों का ठीक ठीक वर्णन करना होगा, यही इन वार्ताओं की पृष्ठभूमि है जो हम आपस में तथा जम्मू और काश्मीर सरकार नेताओं से करते रहे हैं। हमारी ऐसी कोई इच्छा नहीं थी कि इस सम्बन्ध को अपरिवर्तनीय अथवा अन्तिम बना दिया जाये, क्योंकि स्थिति बदलती रहती है। फिर भी शायद यह अत्यधिक रूप से अनिश्चित थी तथा संविधान बनाते समय इसे कुछ अधिक निश्चित बनाना आवश्यक था, इसके साथ यह भी आवश्यक था कि कोई परस्पर-विरोधी बात न होनी चाहिये जो कि हमारे संविधान के उपबन्धों के समनुकूल न हो। इसी कारण से यह वार्ता हुई। यह वार्ता गत कुछेक दिन में हुई तथा मैं अब आप के सामने इसके परिणाम रखने जा रहा हूं।

किन्तु यह बताने से पहले मैं आप को याद दिलाना चाहता हूं कि इस संविधान सभा का एक मुख्य कार्य भूमि-सुधार प्रश्न का निवारण करना था, तथा कुछ ही महीनों में उन्होंने इसका सम्पादन किया है तथा सफलता से सम्पादन किया है। जिस फुरती तथा कार्यचातुर्य से उन्होंने यह काम निभाया है उसे देखकर मुझे कुछ कुछ ईर्षा होती है। मैं यह बात मानता हूं कि मुझे उनके काम की गति को देख कर कुछ कुछ ईर्षा होती है, विशेषकर जब कि मैं देखता हूं कि भारत के विभिन्न राज्यों में इस सम्बन्ध में कितनी कठिनाइयां उत्पन्न हो रही हैं, कितनी अड़चनें पेश आ रही हैं तथा कितना विलम्ब हो रहा है। मैं आप को यह बताना चाहता हूं कि उन्होंने वहां क्या किया। कहा जाता है कि उन्हों ने जमींदारों को जमीनों से बिना किसी प्रतिकर के बेदखल किया है। यह बात सही नहीं। उन्होंने जमींदारी की अधिकतम सीमा निश्चित की है तथा यह लगभग २३ एकड़ है तथा इसके अलावा जमींदार अपने पास मेवे के बाग रख सकते हैं। मेवे के बागों को उन्होंने हाथ भी नहीं लगाया, जिन लोगों के पास जमीनें थीं उन्हें २३ एकड़ भूमि अपने पास रखने की अनुमति दी गई तथा इसके अलावा वह मेवे के बाग अपने पास रख सकते हैं। सदन को याद रखना चाहिए कि काश्मीर में मेवा-दार बागों का महत्व बहुत कुछ है। उन्हों ने उन्हें हाथ नहीं लगाया। इसके अलावा और भी जमीनें हैं जैसे चरागाहें आदि। यह भी जमींदारों के पास ही हैं। इस पर बाद में अग्रेतर विचार होगा। प्रत्येक व्यक्ति को अपने पास २३ एकड़ भूमि रखने दी गई जब कि औसत केवल दो एकड़ है। तो २३ एकड़ की जो अधिकतम सीमा रखी गई है वह तुलना में कुछ कम नहीं दिखाई देती हैं।

अभी काश्मीर सरकार के प्रतिनिधियों तथा भारत सरकार के बीच जो वार्ता हुई हैं, उस में यह बात स्पष्टतया मान ली गई है कि काश्मीर राज्य भारतीय गणतंत्र का एक अंग है। यह भारत का एक हिस्सा है। मूल स्थिति यही कुछ है।

नागरिकता का प्रश्न उत्पन्न हुआ। पूर्ण नागरिकता वहां पर भी लागू होती है। परन्तु हमारे काश्मीरी मित्रों को एक अथवा दो बातों के बारे में आशंकायें हैं। महाराजा के शासन काल में वहां कुछ ऐसे कानून थे जिन के अन्तर्गत काश्मीर से बाहर के लोग वहां कोई जमीन न खरीद सकते थे और न ही अपने पास रख सकते थे। उन दिनों में महाराजा का डर था कि कहीं अंग्रेज बड़ी संख्या में वहां जा कर आबाद न हों, क्योंकि वहां की जलवायु

मनभावनी थी। यद्यपि अंग्रेजों के शासन के अधीन महाराजा से उनके बहुत से अधिकार छीन लिये गये, फिर भी महाराजा इस बात पर अड़ा रहा कि बाहर का कोई भी व्यक्ति वहां भूमि अर्जित न कर सके। महाराजा ने राज्य के प्रजाजनों से सम्बन्धित जो अधिसूचना जारी की है उस में प्रजाजनों की चार श्रेणियां दी गई है। प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी, तृतीय श्रेणी तथा चतुर्थ श्रेणी। जब तक कि आप इन में से किसी न किसी श्रेणी से सम्बन्ध न रखते हों आप वहां न ही कोई जमीन खरीद सकते हैं और न ही कोई अचल सम्पत्ति। तो जम्मू तथा काश्मीर की वर्तमान सरकार भी उस अधिकार को यथावत् रखना चाहती है, क्योंकि उन्हें डर है, तथा उनका डर सही भी है, कि काश्मीर उन लोगों से कुचल जायगा जो केवल अपने पैसे के बल बोते पर वहां के सुन्दर दर्शनीय स्थानों को खरीद लेंगे। वह महाराजा के कानून में कुछ फेर बदल करके इसे उदार बनाना चाहते हैं। लेकिन फिर भी वह कुछ न कुछ प्रतिबंध ऐसा रखना चाहते हैं जिस से बाहर का कोई व्यक्ति वहां जमीन अर्जित न कर सके। संविधान के अनुच्छेद १९ खंड (५) के अन्तर्गत यह वर्तमान विधि के सम्बन्ध में अथवा बाद में बनाये जाने वाले किसी विधान के सम्बन्ध में अनुमति योग्य है। कुछ भी हो हम ने यह बात मान ली कि यह मामला साफ हो जाना चाहिये, पुराने कानून के अन्तर्गत वहां के प्रजाजनों को भूमि अर्जन, सेवाओं, छात्रवृत्तियों तथा अन्य छोटी मोटी बातों के सम्बन्ध में कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं। इसलिये हम ने यह बात मान ली तथा निम्नलिखित उपबन्ध रखा :

"राज्य विधान मंडल को राज्य के स्थायी निवासियों के अधिकारों तथा विशेषाधिकारों को, विशेषकर जिनका सम्बन्ध अचल सम्पत्ति के अर्जन, नियुक्तियों तथा ऐसे ही अन्य मामलों से हो विनियमित करने तथा उनकी परिभाषा करने का अधिकार होगा। उस समय वहां वर्तमान राज्य विधि ही लागू रहेगी।"

नागरिकता से सम्बन्धित और भी एक मामला था। १९४७ से गड़बड़ी के कारण बहुत से लोग बाहर चले गये हैं तथा वह अब वापस काश्मीर जाना चाहते हैं। इसलिये उनकी वापसी का भी उपबन्ध होना चाहिये। वास्तव में हमारे अपने संविधान में भी इस सम्बन्ध में उपबन्ध रखा गया है तथा मैं सदन को बता देना चाहता हूं कि इस वर्ष के आरम्भ में अथवा गत वर्ष पूर्वी बंगाल से आने वाले प्रव्रजकों को भारतीय नागरिकता प्रदान करने का प्रश्न यहां भी उठाया गया था। हम उन्हें अपनी निर्वाचक नामावलियों में शामिल न कर सके क्योंकि वह बहुत देर से आये थे। अब हम उन्हें शामिल कर रहे हैं। जो लोग निश्चित शर्तों को पूरा करेंगे वह शामिल कर लिये जायेंगे। इसलिये जो लोग काश्मीर से पाकिस्तान अथवा अन्य स्थानों पर चले गए हैं तथा जो सामान्यतया नागरिकता के ग्राह्य नहीं हो सकते हैं, उनके लिए उपबन्ध रखना होगा यदि वह वापस आना चाहें। तो हम ने निश्चय किया कि:

"जम्मू तथा काश्मीर राज्य के उन स्थायी निवासियों की वापसी के लिये, जो कि १९४७ की गड़बड़ी के सिलसिले में अथवा इस के भय में पहले ही पाकिस्तान चले गए हैं तथा वापस नहीं आ सके हैं नागरिकता से सम्बन्धित नियमों में विशेष

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

उपबन्ध रखा जाना चाहिये। यदि वह वापस आयेंगे तो उन्हें नागरिकता से सम्बन्धित अधिकार तथा विशेषाधिकार प्राप्त होने चाहियें तथा इसके दायित्व उन पर लागू होने चाहियें।"

इसके बाद मूल अधिकारों का प्रश्न आया। इस बात पर एक सामान्य समझौता हुआ कि मूल अधिकार होने चाहियें तथा वह उस राज्य पर लागू होने चाहियें। किन्तु यहां भी हमारे काश्मीरी मित्रों के मत में भारी आशंकाएं उत्पन्न हुईं। एक प्रश्न यह था कि कहीं यह मूल अधिकार उनके भूमि सुधार सम्बन्धी विधान में इस समय तथा भविष्य में बाधक न बने। निस्सन्देह हम भी यह नहीं चाहते थे कि यह उनकी प्रगति के मार्ग में रोड़े अटकायें। हमें उनके भूमि सम्बन्धी सुधार पसन्द हैं। हमारे विचार में यह बहुत अच्छे थे, वास्तव में किये कराये काम में गड़बड़ डालना एक असम्भव बात है, परन्तु हम ने कहा कि यह मामला भी साफ होना चाहिये। दूसरी बात यह थी। काश्मीर पर आक्रमण, युद्ध, युद्ध-बंदी तथा अन्य बातों के कारण परिस्थिति में एक प्रकार का तनाव आ गया है; जासूसी करने के लिये कुछ लोग जैसे तैसे राज्य में प्रवेश कर पाते हैं। इस से कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। बारबार जासूसी के मामलों के बारे में सुना जाता है। कुछ तोड़ फोड़ तथा इस प्रकार की अन्य गतिविधियां भी होती हैं। परन्तु यदि आप उस राज्य में जायेंगे तो आप बिल्कुल सामान्य परिस्थिति पायेंगे। अर्थात राज्य का कार्य सम्पादन काफी हद तक सामान्य रूप से हो रहा है। परन्तु उस सामान्य परिस्थिति को सष्ठ पर यह तनाव है कि शत्रु गड़बड़ डालने तथा परिस्थिति बिगाड़ने की कोशिश करता रहता है। तथा राज्य सरकार को हर समय सावधान तथा चौकस रहना पड़ता है। हमें बताया गया कि मूल अधिकारों से सम्बन्धित उपबन्धों का कोई भी भाग राज्य सरकार की इन कार्यवाहियों में बाधा डाल सकता है। इस लिये हम ने यह बात मान ली कि वर्तमान परिस्थितियों में यह बात अत्यन्त ही आवश्यक तथा काश्मीर के हित में है कि राज्य सरकार को यह अधिकार प्राप्त होना चाहिये। तो इस शर्त के साथ इस बात पर अग्रेतर विचार किया जा सकता है कि यह काम कैसे हो। इस तरह का पूर्ण विचारविमर्श आवश्यक है जिस से कि मूल अधिकारों को ऐसे परिवर्तनों के साथ लागू किया जा सके जो इस दृष्टिकोण से आवश्यक हों तथा जिस पर सहमति प्राप्त हो।

यह बात मान ली गई है कि उच्चतम न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद १३१ में उल्लिखित विवादों के सम्बन्धों में मौलिक क्षेत्राधिकार प्राप्त होगा। यह बात भी मान ली गई कि उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार उन मूल अधिकारों के सम्बन्ध में भी होगा जो कि उस राज्य पर लागू होंगे। भारत सरकार की ओर से हम ने सिपारिश की कि वहां का सलाहकार न्यायाधिकरण जो महाराजा के न्यायिक सलाहकार बोर्ड के नाम से प्रसिद्ध है, तोड़ दिया जाना चाहिये तथा इस का क्षेत्राधिकार भारत के उच्चतम न्यायालय को प्राप्त होना चाहिये अर्थात् उच्चतम न्यायालय, संविधान के उपबन्धों के अनुसार सभी दीवानी तथा फौजदारी मामलों में अन्तिम न्यायालय होगा। काश्मीर सरकार के प्रतिनिधि मंडल को हमारे इस प्रस्ताव पर कोई आपत्ति नहीं

थी, वह इसे मान लेने को तैयार थे परन्तु उनका कहना है कि वह विस्तार में इस मामले पर अग्रेतर विचार करेंगे।

अब मैं उस प्रश्न पर आता हूं जिस के सम्बन्ध में काफी चर्चा हुई है तथा जिस का समाचार पत्रों में उल्लेख किया गया है। यह उस राज्य के प्रमुख का प्रश्न है।

पुराने इतिहास को छोड़ कर मैं यह बता देना चाहता हूं कि काश्मीर संविधान सभा के उद्घाटन के समय जो अभिभाषण दिया गया था उस में स्पष्ट रूप से उन नीतियों का उल्लेख किया गया था जिसके अनुसार उस सभा को काम करना था तथा उन में एक नीति यह भी थी कि प्रजातांत्रिक आदेशिका द्वारा राज्य के प्रमुख का निर्वाचन होना चाहिये। यह काश्मीर नेशनल कांफ्रेंस की चिरकाल से घोषित नीति रही है। उस सिद्धान्त की व्याख्या के सम्बन्ध में उस समय कोई आपत्ति नहीं थी। सतर्कता पूर्वक विचार करने के पश्चात--क्योंकि हमें सदैव दो मामलों पर विचार करना था, एक यह कि काश्मीर की जनता की इच्छाओं को कार्य रूप दिया जा सके तथा दूसरे यह कि हमारे अपने संविधान के अनुसार काम हो सके--हम ने एक ऐसा हल निकाला है जिस पर कि दोनों पक्ष राजी हैं। आप शब्दों के झमेले में न पड़ कर भाषा को अधिक महत्व न दें। वैधानिक तथा संवैधानिक उद्देश्यों के लिये शब्दों में हेर फेर किया जा सकता है, परन्तु यह इस बात को प्रकट करेगा कि हम किस ढंग से विचार करते रहे हैं तथा हम ने क्या कुछ स्वीकार किया है। यह बातें मान ली गई हैं: (१) राज्य का प्रमुख वह व्यक्ति होगा जो राज्य के विधान-मंडल की सिफारिशों पर राष्ट्रपति द्वारा अभिज्ञात होगा, (राज्य का विधान-मंडल किस तरह से अपनी सिफारिश पेश करेगा, इस का निर्णय उस राज्य का विधान-मंडल ही करेगा। क्या यह निर्वाचन द्वारा होगा अथवा नहीं, इसका निर्णय भी वही करेंगे; यह बहुमत द्वारा हो सकता है, दो-तिहाई बहुमत द्वारा हो सकता है, कुछ भी हो, उन्हें सिफारिश करनी है; तथा उन के बाद उस व्यक्ति को अभिज्ञात करना राष्ट्रपति का काम है)। (२) वह, अर्थात राज्य का प्रमुख, राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यन्त अपना पद धारण करेगा। (३) वह--राज्य का प्रमुख—राष्ट्रपति के नाम अपने हाथ से लिख कर अपने पद से त्यागपत्र दे सकता है। (४) इस अनुच्छेद में उल्लिखित उपबन्धों के अधीन, राज्य का प्रमुख उस दिनांक से, जब कि वह उस पद को ग्रहण करेगा पांच वर्ष तक अपना पद धारण करेगा, किन्तु वह अपनी पदावधि के समाप्त होने पर भी उस समय तक अपने पद को धारण करेगा जब तक कि उसका उत्तराधिकारी इस पद को ग्रहण न करेगा। राज्य के प्रमुख के सम्बन्ध में इतना कुछ है।

राष्ट्रीय झंडे के बारे में काफी गलत-फ़हमी हुई है। मेरे विचार में इस सम्बन्ध में स्थिति को सार्वजनिक वक्तव्यों द्वारा स्पष्ट किया गया है। फिर भी हम ने सोचा कि इसे और भी स्पष्ट किया जाना चाहिये। जम्मू तथा काश्मीर के प्रधान मंत्री शेख अब्दुल्ला ने खुले आम कहा है कि जहां तक कि उनका सम्बन्ध है यह प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है क्योंकि राष्ट्रीय झंडा सर्वोच्च झंडा है तथा जम्मू तथा काश्मीर राज्य में इसका बिल्कुल वही दर्जा है जो कि भारत के किसी अन्य भाग में इसका है। राज्य के झंडे का राष्ट्रीय झंडे से कोई मुकाबला नहीं है। परन्तु वह राज्य के इस निशान को जारी रखना चाहते हैं क्योंकि इस का

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सम्बन्ध काश्मीर के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास तथा भावना से है। यह बात मान ली गई। साथ ही यह भी कहा गया कि इसे औपचारिक रूप से हो सके तो राज्य की संविधान सभा द्वारा, स्पष्ट किया जाना चाहिये।

यह बात भी मान ली गई कि मृत्यु-दंड को मंसूख करने अथवा बदलने का अधिकार भारत के राष्ट्रपति के हाथ में होना चाहिये।

आर्थिक एकीकरण के सम्बन्ध में भी कुछ वार्ता चली है। इस बात का फैसला किया गया कि उस राज्य तथा भारत सरकार के बीच आर्थिक व्यवस्था पर अग्रेतर विचार किया जाना चाहिये। तथा इसका विस्तार तैयार किया जाना चाहिये। जैसे कि मैं ने निवेदन किया स्थिति बदलती रहती है। इन मामलों पर कुछ कुछ विचार हुआ है; जो कुछ भी आर्थिक व्यवस्था होगी उसे हम धीरे धीरे कार्य रूप देते रहेंगे।

फिर आपात सम्बन्धी अधिकारों का प्रश्न है। यह हमारे संविधान में, विशेष कर संविधान के अनुच्छेद ३५२ में दिए गए हैं। यह भी मान लिया गया है; मैं सदन को याद दिलाऊं कि अनुच्छेद ३५२ क्या है? आक्रमण, बाहरी खतरे अथवा भीतरी गड़बड़ के मामले में राष्ट्रपति को आपात की स्थिति घोषित करने का अधिकार होगा तथा फिर इसके परिणाम स्वरूप और भी बातें होती हैं। फिर सारा मामला संसद् के हाथ में आ जाता है। यह बात भी मान ली गई परन्तु हमारे काश्मीरी मित्रों को 'भीतरी गड़बड़" शब्दों के सम्बन्ध में कुछ आशंकाएं उत्पन्न हुईं। शेष के सम्बन्ध में उन्हों ने कहा कि निस्सन्देह ऐसा ही होना चाहिये यदि गम्भीर आपात उत्पन्न हो जाये। 'भीतरी गड़बड़' के बारे में वह चाहते हैं कि राज्य सरकार की सम्मति से ऐसा होना चाहिये। तो यह बात मान ली गई कि अनुच्छेद ३५२ उस राज्य पर भी निम्नलिखित संशोधन के साथ लागू होगा; अर्थात यह कि पहले पैरा के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें :—

> "किन्तु भीतरी गड़बड़ के सम्बन्ध में यह काम राज्य सरकार की प्रार्थना पर अथ वा उसकी सम्मति से किया जायगा"

अर्थात उस राज्य में राज्य सरकार की सम्मति से आपात घोषित किया जायगा।

यही वह मुख्य बातें है जिन पर कि चर्चा की गई है तथा मेरे विचार में हम ने संतोषजनक फैसले किये हैं। यह समझौते काश्मीर की जनता की इच्छाओं के अनुकूल हैं तथा हमारे संविधान के अनुकूल हैं। मैं इस बात को दुहराना चाहता हूं कि इस में कोई अन्तिम बात नहीं तथा हम बाद में धीरे धीरे इस में विस्तार की बातें शामिल कर सकते हैं। मेरा अनुमान है कि इस समय काश्मीर तथा भारतीय संघ के आपसी सम्बन्ध संविधान के अनुच्छेद ३७० द्वारा अधिशासित हैं। उस राज्य का भारतीय संघ में प्रवेश पूर्ण है। इस सम्बन्ध में लोगों के दिमाग में कुछ भ्रान्ति है। प्रवेश वस्तुतः तथा कानून की दृष्टि से पूर्ण है। जम्मू तथा काश्मीर राज्य भारत का उसी तरह अंग तथा क्षेत्र है जैसे कि अन्य कोई राज्य है। जम्मू तथा काश्मीर के लोग भी अन्य राज्यों के लोगों की भांति ही भारत के नागरिक हैं। जम्मू तथा काश्मीर राज्य ने जिन विषयों में भारत में प्रवेश

किया है वह सीमित हैं अथवा उस से कम हैं जो अन्य राज्यों पर लागू होते हैं; इसी बात से ऐसी कुछ गलतफ़हमी पैदा हो रही है कि उस राज्य का भारत में प्रवेश आंशिक है। परन्तु यह बात नहीं है। प्रवेश बिल्कुल पूर्ण है। वास्तव में, शुरू में इन सभी राज्यों ने इन्हीं तीन विषयों में प्रवेश किया था। यह हो सकता कि बाद में और विषय केन्द्र को सौंपे जायें, परन्तु हम ऐसे मामलों में अन्य सम्बन्धित पक्षों की सम्मति से काम करते आये हैं तथा हम आगे भी ऐसा ही करने की प्रस्थापना करते हैं। अब मेरे विचार में राष्ट्रपति को संविधान के अनुच्छेद ३७० के अन्तर्गत इन परिवर्तनों को, जिनका कि हम ने सुझाव दिया है, लागू करने के लिये कुछ आदेश जारी करना होगा।

श्रीमान्, आप ने मेरे वक्तव्य को ध्यानपूर्वक सुनने का जो कष्ट किया है उस के लिये मैं आपका तथा सदन का आभारी हूं।

श्री एन० सी० चटर्जी (हुगली) : श्रीमान्, २६ जून को माननीय प्रधान मंत्री ने बचन दिया था कि सदन को काश्मीर के विषय पर पूर्ण रूप से वाद विवाद करने के लिये अवसर मिलेगा। अभी बताये गये महत्वपूर्ण मामलों को दृष्टि में रखते हुए क्या उस बचन को पूरा करने का अवसर दिया जायगा ?

श्री जवाहरलाल नहरू : श्रीमान्, सरकार इन मामलों पर पूर्णतयः चर्चा अथवा विचार कराने के लिये कुछ समय अथवा एक दिन देने के लिये बिल्कुल तैयार है। मुझे आशा है कि माननीय सदस्य उतनी देर यहां ठहरने के लिये तैयार होंगे जितना कि इसके लिये तथा अन्य उद्देश्यों के लिये आवश्यक होगा।

राज्य परिषद में संदेश

सचिव : श्रीमान्, मुझे सूचना देनी है कि निम्नलिखित संदेश राज्य परिषद् के सचिव से प्राप्त किया गया है :—

"राज्य परिषद के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन नियमों के नियम १२५ के उपबन्धों के अनुसार मुझे आपको यह सूचना देने का निदेश दिया गया है कि राज्य परिषद् ने अपनी २२ जुलाई १९५२ वाली बैठक में निम्नलिखित विधेयकों को जिन्हें कि लोक सभा ने १६ जुलाई १९५२ वाली अपनी बैठक में पास किया था, बिना किसी संशोधन के स्वीकृत किया है:—

१, भारतीय चाय नियंत्रण (संशोधन) विधेयक, १९५२।

(२) रबड़ (उत्पादन तथा विक्रय) विधेयक, १९५२।

रक्षित तथा वायु सेना विधेयक

श्री बी० दास (जाजपुर-क्योंझर) : सदन के कल स्थगित होने से पूर्व मैं माननीय रक्षा मंत्री को यह विधेयक प्रस्तुत करने के लिये बधाई दे रहा था। एक सक्षम सेना तैयार करने से ही हम शान्ति की रक्षा कर सकते हैं। रक्षा मंत्रालय के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि इस पर अभी भी आई० सी० एस० अधिकारियों का पुरानी तरह राज है। रक्षा मंत्रालय के संघटन तथा विचार धारा में जरा भी परिवर्तन नहीं आया है। इस विधेयक के अन्त में जो वित्तीय ज्ञापन दिया गया है उसे पढ़ कर बड़ी निराशा होती है। इस के प्रथम पैरा में कहा गया है कि इस विधयक के सिलसिले में तुरन्त ही कोई विशेष धन व्यय नहीं करना रहेगा। किन्तु इसके तीसरे ही